अशोक पांडे

बनाम

के.एम. मायावती और अन्य

13 जून, 2007

[डॉ. अरिजीत पासायत और पी. पी. नौलेकर, जे. जे.]

भारत का संविधान,1950-अनुच्छेद 164 (1), 164 (4) और 177 मुख्यमंत्री/मंत्री के पद पर उन व्यक्तियों की नियुक्ति, जो राज्य विधानमंडल के सदस्य नहीं हैं- वैधता के सम्बन्ध मे अवधारणा-- संविधान में ऐसा कुछ भी नहीं है जो मुख्यमंत्री और मंत्री की नियुक्ति को अवैध बना दे, जिनमें से कोई भी राज्य विधानमंडल का सदस्य नहीं है, अवैध- एक साथ सदस्यता का प्रतिबन्ध नियम, 1950 ।

यह रिट याचिका संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत प्रत्यर्थी सं.1 व 2 के विरूध अधिकार पृच्छ याचिक की मांग इस आधार पर करते हुये दायर की गई थी कि वे क्रमशः मुख्यमंत्री और मंत्री के रूप में नियुक्त होने से पुर्व ही वे राज्यसभा के सांसद थे और इस कारण अनुच्छेद 164(4) के प्रावधान उन पर लागू नहीं होते है।

याचिका खारिज करते हुए न्यायलय ने अभिनिर्धारित किया कि--

1. संविधान के अनुच्छेद 177 के आधार पर कोई भी मंत्री भले ही वह राज्य के विधानमंडल के किसी भी सदन का सदस्य न हो, फिर भी वह राज्यपाल के अभिभाषण के समय विधानमंडल के किसी भी सदन की एक साथ बुलाई गई बैठक में उपस्थित रहने का हकदार होगा जैसा कि अनुच्छेद 175 द्वारा परिकल्पित किया गया है। अनुच्छेद 164 (4) में प्रावधान है कि जो मंत्री छह महीने की किसी भी अवधि के लिए राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं है, वह उक्त अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा। स्पष्ट शब्दों को किसी भी तरह से कम नहीं आंका जा सकता है और किसी ऐसे मामले तक सीमित नहीं किया जा सकता है जहां कोई मंत्री राज्य के विधानमंडल का सदस्य है और किसी कारण से राज्य विधानमंडल में अपनी सीट खो देता है। संविधान में ऐसा कोई भी प्रावधान नहीं है जो मुख्यमंत्री और मंत्री की नियुक्ति को अवैध बना दे, जिनमें से कोई राज्य विधानमंडल का सदस्य नहीं है। मुख्यमंत्री के रूप में किसी व्यक्ति की नियुक्ति को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि वह नियुक्ति के समय राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं था।

[पैरा 5] [1008-एफ; 1009-ए, बी]

हर शरण वर्मा बनाम श्री त्रिभुवन नारायण सिंह (1971) एस. सी. सी. 616 और डॉ. जनक राज जय बनाम एच. डी देवेगौड़ा, (1997) 10 एस. सी. सी. 462, पर आधारित ।

2. अनुच्छेद 164(1) मे "विधान मंडल के सदस्यों में से" अभिव्यक्ति का अभाव इस स्थिति का ध्यतक है कि इस प्रावधान के तहत एक गैर-विधायक को मुख्यमंत्री या मंत्री के रूप में नियुक्त किया जा सकता है, लेकिन वह नियुक्ति अनुच्छेद 164 (4), द्वारा होगी, जो ऐसे गैर-सदस्य पर, मंत्री या मुख्यमंत्री जैसा भी मामला हो बने रहने पर प्रतिबंध लगाता है, जब तक कि वह निरन्तंर 6 महिने की अवधी के भीतर विधानमंडल के लिए निर्वाचित नही हो जाता । उसकी नियुक्ति की तारीख से निरन्तर 6 माह की अवधि के भीतर विधानमण्डल के लिए निर्वाचित नही हो जाता । 164 (4) किसी गैर विधायक को अल्पावधि के लिए मंत्री के रूप मे नियुक्त करने के लिए शक्ति का स्रोत या सक्षम करने वाला प्रावधान नहीं है। यह वास्तव में एक गैर सदस्य के लिए अयोग्यता या प्रतिबंध की प्रकृति का है जिसको मुख्यमंत्री या मंत्री जैसा भी मामला हो, के रुप मे नियुक्त किया गया है, निरन्तर छह महीने की अवधि के भीतर निर्वाचित हुए बिना पद पर रहता है। [पैरा 13] [1011-बी, सी, डी]

एस. आर. चौधरी बनाम पंजाब राज्य और अन्य, [2001] 7 एस. सी. सी. 126, पर आधारित।

संदर्भः संविधान सभा की बहस दिनांक 1 जून, (1949) खंड VIII पृष्ठ 521

सिविल मूल क्षेत्राधिकारः- रिट याचिका (सिविल) नं0 296/2007

(भारत का संवीधान अनुच्छेद 32 के अधीन)

अशोक पांडे याचिकाकर्ता- स्वयं उपस्थित।

ज्योतेंद्र मिश्रा, महाधिवक्ता देवेंद्र अरोड़ा, शैल कुमार द्विवेदी सहायक महाधिवक्तागण जी.वी.राव प्रत्यार्थीगण की ओर से

न्यायालय का निर्णय पारित किया गया–

डॉ.अरिजीत पासायत जे

1. यह याचिका भारत का संविधान 1950 (संक्षेप में संविधान) के अनुच्छेद 32 के तहत दायर की गई है जिसमे प्रतिवादी संख्या.1 और 2 के खिलाफ अधिकार प्रिच्छा रिट की मांग की गई है मुख्यत शिकायत यह है की प्रतिवादी संख्या क्रमंश 1 ओर 2 मुख्यमन्त्री ओर मन्त्रि के रुप मे नियुक्त होने के योग्य नही है क्योंकि वे राज्यसभा के सदस्य थे और इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 164 (4) सपठित अनुच्छेद 164 (1) के तहत अयोग्य घोषित कर दिये गए थे। मूल स्थिति यह है चूंकि वे राज्य सभा के सदस्य थे, इसलिए 6 महीने की अवधि के भीतर राज्य की विधानसभा के लिए चुने जाने की आवश्यकता उन पर लागू नहीं होती है क्योंकि वे पहले से ही राज्यसभा के सांसद है।

2. इस रुख की सराहना करते हुए हम उन प्रावधानों पर ध्यान देंगे- जिन पर याचिकाकर्ता द्वारा जोर दिया गया है जो व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुआ है।

3. अनुच्छेद 164 (1) और (4) इस प्रकार हैः

"(1) मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल, मुख्यमत्री की सलाह पर करेगा तथा मंत्री, राज्यपाल के प्रसाद प्रयन्त अपने पद धारण करेगें।"

(4) कोई मंत्री, जो निरन्तर छह महीने की किसी भी अवधि के तक राज्य के विधानमंडल का सदस्य नही है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा ।

4. अनुच्छेद 163 पर भी ध्यान देना आवश्यक है जो इस प्रकार हैः

"राज्यपाल को सहायता ओर सलाह देने के लिए मन्त्रिपरिषद (1) जिन बातो मे इस सविंधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने कृत्यो या उनमें से किसी को अपने विवेकानुसार करें उन बातो को छोडकर राज्यपाल को अपने कृत्यों का प्रयोग करने मे सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रि-परिषद होगी जिसका प्रधान, मुख्यमंत्री होगा ।

(2) यदि कोई प्रश्न उठता है कि कोई विषय ऐसा है या नहीं जिसके सम्बन्ध मे इस सविंधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करे तो राज्यपाल का अपने विवेकानुसार किया गया विनिश्चय अन्तिंम होगा और राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की विधि मान्यता

इस आधार पर प्रश्नगत नही की जायेगी की उसे अपने विवेकानुसार कार्य करना चाहिये था या नही।

(3) इस प्रश्न की किसी न्यायालय मे जांच नही की जायेगी की क्या मंत्रियों ने राज्यपाल को कोई सलाह दी, और यदि दी तो क्या दी ।"

5. संविधान के अनुच्छेद 177 के आधार पर कोई भी मंत्री चाहे वह राज्य विधानमंडल के किसी भी सदन का सदस्य न हो, फिर भी वह राज्यपाल के अभिभाषण के समय विधानमंडल के किसी भी सदन की एक साथ बुलाई गई बैठक में उपस्थित रहने का हकदार होगा जैसा कि अनुच्छेद 175 द्वारा परिकल्पित किया गया है। अनुच्छेद 164 (4) में यह प्रावधान है कि जो मंत्री छह महीने की किसी भी अवधि के लिए राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं है, वह उक्त अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा। स्पष्ट शब्दों को किसी भी तरह से कम नहीं आंका जा सकता है और किसी ऐसे मामले तक सीमित नही किया जा सकता जहां कोई मंत्री राज्य के विधानमंडल का सदस्य है और किसी कारण से राज्य विधानमंडल में अपनी सीट खो देता है। संविधान में ऐसा कोई भी प्रावधान नहीं है जो मुख्यमंत्री और मंत्री जिनमे से कोई भी राज्य विधानमण्डल का सदस्य नही है, की नियुक्ति को अवैध बना दे, (देखें- हर शरण वर्मा बनाम श्री त्रिभुवन नारायण सिंह (1971) 1 एस. सी. सी. 616) उक्त मामले में

यह अवधारित किया गया कि मुख्यमंत्री के रूप में किसी व्यक्ति की नियुक्ति को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती है कि वह नियुक्ति के समय राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं था ।

6. संविधान सभा में यह संशोधन प्रस्तावित किया गया कि निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाना चाहिएः-

> "एक मंत्री को चुने जाने के समय राज्य की विधानसभा या विधानपरिषद का सदस्य होना चाहिये, जैसा भी मामला हो, परन्तु संशोधन स्वीकार नही किया गया था।(देखें सविंधान सभा बहस दिनांक 1 जून, 1949 खण्ड (VIII) पृष्ठ 521)"

7. संविधान सभा की कार्यवाही का एक संक्षिप्त संदर्भ प्रश्न पर पर्याप्त प्रकाश डालेगा। संविधान सभा के एक सदस्य ने निम्नलिखित आश्य का संशोधन प्रस्तावित कियाः

> " किसी व्यक्ति को तब तक मंत्री नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि वह अपनी नियुक्ति के समय सदन का निवार्चित सदस्य नही हो" ।

8. याचिकाकर्ता ने निवेदन किया कि एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में ऐसे व्यक्ति को मन्त्री पद पर नियुक्त नही किया जायेगा जो विधानमंडल का सदस्य नहीं है,

9. संविधान के प्रारूप का अनुच्छेद 144 (3) जो संविधान के अनुच्छेद 164 (4) से मेल खाता है जो कहता है :

"144 (3) कोई मंत्री, जो निरंन्तर छह मास की किसी अवधि के लिए राज्य के विधानमंडल का सदस्य नहीं है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नही रहेगा।"

10. इस प्रारुप के अनुच्छेद पर बहस के दौरान, सांसद श्री मोहम्मद ताहिर ने निम्नलिखित संशोधन का प्रस्ताव रखा :

कि अनुच्छेद 144 के खंड (3) के स्थान पर निम्नलिखित को प्रतिस्थापित किया जाएः

"(3) कोई मंत्री, उसके इस प्रकार से चुने जाने के समय, राज्य की विधानसभा या विधानपरिषद का सदस्य होगा, जैसा भी मामला हो।"

11. संविधान सभा में प्रस्तावित संशोधन के समर्थन में बोलते हुए श्री ताहिर ने कथन किया किः-

"ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रावधान लोकतंत्र की भावना के अनुरूप नहीं है। यह एक ऐसा प्रावधान है जो 1935 के भारत सरकार अधिनियम में भी उपबन्धित किया गया था तथा निसदेंह रूप से वे दिन साम्राज्यवादी दिन थे और सौभाग्य से वे दिन चले गए हैं। यह प्रावधान उस समय इसलिए उपबन्धित किया

गया था क्योंकि यदि कोई राज्यपाल अपनी पसन्द से किसी को मंत्री के रूप में नियुक्त करना चाहता और सौभाग्य से या दुर्भाग्य से यदि वह व्यक्ति देश की जनता द्वारा चयनित नही होता, तब वह व्यक्ति संविधान तथा 1935 के अधिनियम के प्रावधान के तहत पिछले दरवाजे से मंत्री नियुक्त किया जाता था। लेकिन अब राज्यों के लोग विधान सभा के सदस्यों का चुनाव करेंगे तथा निश्चित रूप से हमें यह सोचना चाहिए कि वे राज्यों के सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को अपने प्रतिनिधि के रूप में परिषद या विधान सभा मे भेजेगें । अतः मै ऐसा कोई कारण नही पाता हूं की, वह व्यक्ति जो राज्यों के लोगों द्वारा तब तक नहीं चुना गया था तथा इसका मतलब है कि वह व्यक्ति राज्य के लोगों द्वारा विधान सभा अथवा परिषद मे उनके प्रतिनिधी के रूम मे पसंद नहीं किया गया था, महोदय उस व्यक्ति को मंत्री के रूप में क्यों नियुक्त किया जाना है।"

डॉ. अम्बेडकर ने संशोधन का विरोध करते हुए उत्तर दियाः

"अब प्रथम बिंदु के संदर्भ में, अर्थात कोई भी व्यक्ति तब तक मंत्री नियुक्त किये जाने के लिए योग्य नही होगा जब तक वह अपनी नियुक्ति के समय सदन का निर्वाचित सदस्य ना हो, ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे जिनको नजर अन्दाज

नही किया जा सकता उनको ध्यान मे रखना भूला गया है । प्रथमतयः और यह कल्पना करना पूरी तरह सम्भव है कि वह व्यक्ति जो अन्यथा मन्त्री का पद धारण करने के लिए सक्षम है, किसी कारणवश निर्वाचन क्षेत्र मे पराजित हुआ है और जो, यध्यपी पूर्णतया उत्तम हो सकता है, उसने निर्वाचन क्षेत्र को नाराज कर दिया हो एवं विशिष्ट निर्वाचन क्षेत्र के अप्रसाद का भागी हो गया हो। यह कोई कारण नही है कि सक्षम सदस्य को इस धारणा पर मंत्रीमंडल का सदस्य नियुक्त करने की अनुमति नही दी जानी चाहिए कि वह उसी निर्वाचन क्षेत्र से या किसी अन्य निर्वाचन क्षेत्र से स्वयं को निर्वाचित कराने में सक्षम होगा। आखिरकार उसे जो विषेशाधिकार प्राप्त है वह एक ऐसा विशेषाधिकार है जो केवल 6 महीने तक ही विस्तारित होता है । यह उस व्यक्ति को निर्वाचित होने पर सदन मे बैठने का अधिकार प्रदान नहीं करता है। मेरा दूसरा निवेदन यह है कि यह तथ्य कि एक मनोनित मंत्री मंत्रीमंडल का सदस्य है, ना तो सामूहिक जिम्मेदारी के सिध्दान्त का उल्लघंन करता है और ना ही विश्वास के सिध्दान्त का उल्लघंन करता है क्योंकि वह मंत्रिमंडल का सदस्य है यदि वह मंत्रिमंडल की नीतियों को स्वीकार करने के लिए तैयार है, मंत्रिमंडल का हिस्सा है और मंत्रिमंडल के साथ त्यागपत्र देता है, जब वह सदन का विश्वास

खो देता है, तो उसकी मंत्रिमंडल की सदस्यता किसी भी तरह से किसी असुविधा या मौलिक सिध्दान्तों, जिन पर संसदीय सरकार आधारित है, उल्लघंन नहीं करती है।"

12. बहस के बाद प्रस्तावित संशोधन को अस्वीकार कर दिया गया और अनुच्छेद 144 (3) अपनाया गया।

13. अनुच्छेद 164 (1) में विधानमंडल के सदस्यों के बीच अभिव्यक्ति का अभाव उस स्थिति का धोतक है कि जबकी उस प्रावधान के तहत एक गैरविधायक को मुख्यमंत्री या मंत्री के रूप मे नियुक्त किया जा सकता है लेकिन वह नियुक्ति अनुच्छेद 164(4) के अनुसार शासित होगी, जो ऐसे गैर सदस्य पर मंत्री या मुख्यमंत्री, जैसी बी स्थिति हो, के रूप मे बने रहने पर यह प्रतिबंध लगाता है कि जबकी वह अपने निर्वाचन की दिनांक से 6 माह की निरन्तर अवधि के भीतर स्वयं को विधानमण्डल के लिए निर्वाचित नही कर लेता । इसलिए अनुच्छेद 164 (4) किसी गैर-विधायक को अल्पावधि के लिए भी मंत्री के रूप में नियुक्त करने के लिए शक्ति का स्रोत या सक्षम प्रावधान नहीं है। यह वास्तव में एक गैर-सदस्य के लिए जो मुख्यमंत्री या मंत्री के रूप में, जैसी भी स्थिति हो, नियुक्त किया गया है, निरन्तर 6 महीने की अवधि के भीतर स्वयं को निर्वाचित किये बिना पद पर बने रहने हेतु अयोग्यता या प्रतिबंध लगाने की प्रकृती जैसा है।

[देखेः- एस. आर. चौधरी बनाम पंजाब राज्य और अन्य।, [2001] 7 एस. सी. सी. 126]

14. डॉ. जनक राज जय बनाम एच. डी. देवगौड़ा, [1997]10 एस. सी. सी. 462 में यह अभिनिर्धारित किया कि विधान सभा के किसी सदस्य को प्रधानमंत्री के रूप में नियुक्त किया जा सकता है। पैराग्राफ 4 और 5 में कानून की स्थिति पर प्रकाश डाला गया था जो इस प्रकार हैः

"4. हालाँकि, याचिकाकर्ता ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत निर्णय के पुनर्विलोकन के लिए इस आधार पर आवेदन किया कि उसे बाद मे पता चला कि भारत के प्रधानमंत्री के रूप मे नियुक्त होने के बाद श्री देवगौडा ने कर्नाटक विधानसभा मे अपनी सदस्यता बरकरार रखी थी। राज्य सभा कर्नाटक विधानसभा मे राज्यसभा के सदस्य बनने पर उन्होंने कर्नाटका विधानसभा की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया । दिल्ली उच्च ने पुनर्विलोकन याचिका को उचित रूप से खारिज कर दिया क्योंकि पुनर्विलोकन याचिका मे इस प्रकार के नये आधारों का आग्रह नही किया जा सकता था। याचिकाकर्ता ने अस्वीकृति को इस आधार पर हमारे सामने चुनौती दी।

5. किसी तरह की कोई शिकायत ना रह जाये इसके लिए हम अतिरिक्त निवेदन पर भी संक्षेप मे विचार करते है। अनुच्छेद 75

(5) के अनुसार कोई व्यक्ति जो निरंतर 6 माह की किसी अवधि तक संसद के किसी सदन का सदस्य नही है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नही रहेगा। हम संविधान का ऐसा कोई अनुच्छेद नहीं पाते हैं जिसके अधीन राज्य विधानमंडल के लिए निर्वाचित व्यक्ति को मंत्री निर्वाचित को अनुच्छेद 75(5) के तहत मंत्री के रूप में नियुक्त होने से प्रतिबंधित करता हो। वास्तव में, अनुच्छेद 75(5) व्यापक रूप से शब्दबद्ध है । इसमें हर वह व्यक्ति शामिल है जो संसद के किसी भी सदन का सदस्य नही है ऐसा व्यक्ति मंत्री के रूप मे नियुक्त किया जा सकता है और वह निरन्तर छह महीने की अवधि तक ही मंत्री बने रह सकता है जब तक की उस अवधि के भीतर संसद के किसी भी सदन के लिए निर्वाचित ना हो जाये यदि वह इस प्रकार निर्वाचित नही होता है तो वह लगातार 6 महिने की समाप्ति पर मंत्री नही रहेगा । यही प्रावधान प्रधानमंत्री पर भी उन कारणों से लागू होता है जो हमने एस.पी. आनन्द बनाम एच.डी. देवगौडा (1996) 6 एससीसी 734 के मामले में अपने फैसले मेनिर्धारित किया है। अनुच्छेद 75(5) के तहत नियुक्त राज्य विधानसभा के सदस्य के सम्बन्ध में अनुच्छेद 75(5) के तहत कोई अयोग्यता कथित नहीं है"

15. एक साथ सदस्यता निषेध नियम, 1950 (संक्षेप में नियमों) को भी मध्यनजर रखना आवश्यक होगा । उक्त नियम संविधान के अनुच्छेद 101 के खंड (2) और अनुच्छेद 190 के खंड (2) के द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए प्रख्यापित किये गये थे, जो इस प्रकार हैः

"1. इन नियमों को एक साथ सदस्यता प्रतिबंध नियम, 1950 कहा जा सकता है।

2. वह अवधी जिसकी समाप्ती पर किसी व्यक्ति का संसद मे स्थान, जिसे संसद ओर भारत के संविधान (इसके बाद इसे "संविधान" के रूप मे संदर्भित किया जायेगा) की पहली अनुसुची मे निर्दिष्ट राज्य के विधानमण्डल के दोनो सदनो का सदस्य चुना जाता है, रिक्त हो जायेगा यदी उसने राज्य के विधानमण्डल मे अपने स्थान को पहले ही नही त्याग दिया है, भारत के राजपत्र मे या राज्य के शासकीय राजपत्र मे प्रकाशन की तारीख से 14 दिन बाद, जो भी बाद मे हों, यह घोषणा की वह इस प्रकार चुना गया है।

3. वह अवधि जिसकी समाप्ती पर संविधान कि पहली अनुसूची मे निर्दिष्ट दो या दो से अधिक राज्यों के विधानमंडलों का सदस्य चुने गये व्यक्ति कि स्थान ऐसे रिक्त हो जायेगी, जब तक की उसने पहले ही एक राज्य को छोडकर शेष सभी राज्यों की

विधानमण्डल मे अपनी सीट से इस्तीफा दे दिया हो, 10 दिवसो कि समाप्ती पर या राज्यो के शासकिय राजपत्र मे यह प्रकाशन की, इस प्रकार से चुना गया है, नवीनतम तारीख जैसा भी मामला हो।"

16. उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा जो कहा गया है, उसके मद्देनजर, अपरिहार्य निष्कर्ष यह है कि यह याचिका बिना योग्यता के है तथा खारिज किये जाने योग्य है जिसे हम खारिज करने का निर्देश देते है।

याचिका खारिज की गई ।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी डॉ.टीना शर्मा, (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।